International Journal of Education, Modern Management, Applied Science & Social Science (IJEMMASSS)
ISSN : 2581-9925, Impact Factor: 6.882, Volume 04, No. 04(II), October - December, 2022, pp. 358-364

वाल्मीकि रामायण में पर्वत, नदी, समुद्र और वन परितंत्र – एक विवेचना

डॉ. राजेन्द्र कुमार पुरोहित*

प्रस्तावना

प्रकृति के प्रति आदि कवि वाल्मीकि की सौन्दर्य संवेदना कवित्वमय है। रामायण में प्रकृति के अधिकांश चित्र विवरणात्मक है। लेकिन उनके चित्रण में जहाँ–तहाँ प्रकृत कवि दृष्टि दिखायी दे जाती है। विवरणात्मक स्थलों में वाल्मीकि ज्यादा सफल चित्र विधान कर पाते है। अयोध्याकाण्ड में गंगा नदी का वर्णन करते हुए कवि ने कहा है कि 'जल के आघात से गंगा उग्र अट्टहास सा करती है, निर्मल फेनो में हॅसती है। कही उनका जल वेणी के आकार का लगता है, कहीं भॅवर उनकी शोभा बढ़ाते हैं। गंगा का प्रवाह कहीं स्थिर एवं गंभीर है, कहीं वेगवान और चंचल है। उसमें कहीं श्रुति–मधुर गंभीर शब्द होता है और कहीं भय उत्पादक कोलाहल। उसके तट पर हंस, सारस आदि शोर करते हैं,चक्रवाक तथा दूसरे मतवाले पक्षी उसके समीप बने रहते हैं।

रामायण में चित्रित पर्वत परितंत्र

वनवास काल में जिस समय राम चित्रकूट पर्वत पर पहुंच कर वहां स्थित प्राकृतिक दृश्य का अवलोकन करते है, उसका वर्णन बड़ा मनोहारी है। कवि ने कुछ पर्वतशिखर चांदी के समान श्वेत वर्ण के, कुछ रूधिर के समान रक्त वर्ण के कुछ इन्द्र नील मणी के समान कृष्ण वर्ण के बताये है और इनके शिखर पक्षियों से युक्त बताये है, कुछ पर्वत शिखर पुखराज अथवा स्फटीक मणि के समान स्वच्छ और केवड़े के फूल के समान कांति वाले हैं और कुछ क्षेत्र नक्षत्रों और पारे के समान प्रकाशित होते हैं।

चित्रकूट पर्वत विविध प्रकार के पक्षियों और मृग, व्याघ्र, चित्ता और रीछ से भरपूर था। पर्यावरणीय दशाऐं अनुकूल होने के कारण इस पर्वत पर विविध प्रकार के फूलदार और फलदार वृक्ष जैसे आम, जामुन, असन, प्रियाल, कटहल, धव, अंकोला, भव्य,तिनिश, बेल, तिन्दुक, बाँस, नीम्ब, महुँआ, तिलक, बेर, आँवला, आदि की बहुतायत थी।

वाल्मीकि रामायण के युद्धकाण्ड के 39वे सर्ग में सुवेल पर्वत और उसके शिखर त्रिकूट पर्वत का वर्णन मिलता है। जिस के पर्वत शिखर का विस्तार 100 योजन अर्थात लगभग 1300 किमी. था और इनकी ऊँचाई पर कोई भी पक्षी सरलता से उड़कर नहीं जा सकता था।

किष्किंधाकाण्ड में वर्णित में वर्णित पम्पापुर में कवि ने पर्वतीय प्रपातों का वर्णन किया है और उस वर्णन में लिखा है कि तीव्र वेग से प्रवाहित होते हुए प्रपात पर्वत के शिखर से निम्न प्रदेशों का प्रक्षालन करते हुए मुक्तावली के समान प्रतीत होते है।

रामायण में पर्वतों की बादलो से और बादलो की पर्वतो से तुलना देखी जा सकती है। रामायण काल में पर्वतो पर घने जंगल मौजूद थे जिससे कि वर्षा अच्छी होती थी और पर्वत शिखर वर्षाकाल में सदैव मेघों से आच्छन्न रहते थे।

* सह आचार्य, इतिहास, राजकीय बांगड़ स्ना. महाविद्यालय, पाली, राजस्थान।

कवि ने वाल्मीकि रामायण में किष्किधां और लंका के समीप प्रस्त्रवण एवं त्रिकूट पर्वत का अधिक वर्णन किया है। कवि ने पर्वतीय परितंत्र को और पर्वतीय वनस्पतियों का अपने ग्रंथ में विस्तृत उल्लेख किया है। रामायण में पर्वतीय परितंत्र के जैविक और अजैविक दोनो ही प्रकार के घटको का उल्लेख मिलता है।

कवि ने आम, जामुन, असन, लोध्र, प्रियाल, कटहल, धव, अंकोला, भव्य, तिनिश, बेल, तिंदूक, बॉस, बेर, ऑवला आदि वृक्षों का उल्लेख किया है। इसी प्रकार पलाश, मालती, मल्लिका, पद्म, करवीर, केतकी, सिंदुवार, माधवीलता, चंपा, नागकेशर, अर्जुन, नील आदि पुष्प वृक्षा का उल्लेख किया है। इसी प्रकार उच्च पर्वतीय वनस्पति साल–ताल–तमाल का भी उल्लेख आता है।

जैविक घटको में मृग–मृगी, सारस व मयूर, सर्प, चीता, रीछ और शेर का उल्लेख मिलता है।

रामायण में वर्णित नदी परितन्त्र

कवि ने रामायण में कई नदियों का उल्लेख किया है। वाल्मीकि रामायण में गंगा और नर्मदा के अलावा कई अन्य नदी तंत्रो का उल्लेख है जिनमें चक्षु, कामदुधा, भद्रा, पञ्चचमक्षुधारा, अरूणोदा, ब्रह्मपुत्र (गंगा), सीता, जम्बू (सिन्धु), अरूणा, नृम्णा, सावित्री, सुप्रभाता, सत्यम्भरा, सरस्वती, कुहूः, रजनी, नन्दा, राका, रसकुलया, मधुकुलया, मित्रविन्दा, श्रुतिवृन्दा, देवगर्भा, घृतच्युता, मन्त्रमाता, अभया, अमृतौघा, आर्यका, तीर्थवती, वृत्तिरूपवती, पवित्रवती, शुक्ला, अनद्या, आयुर्दा, उभयस्पृष्टिः, अपराजिता, पञ्चपदी, सहस्त्रस्तुतिः, निजधृतिः आदि नदियों का उल्लेख प्राप्त होता है।

इसी प्रकार सीता अन्वेषण प्रसंग में भागीरथी, सरयू, कौशिकी, यमुना, सरस्वती, सिंधु, शोणभद्र, मही तथा कालमही आदि नदियों का नाम मिलता है।

रामायण में वेदश्रुति नदी, मयूर और हंसों के कलरव से व्याप्त स्यन्दिका नदी के साथ–साथ गोमती नदी का भी सुन्दर चित्रण मिलता है। इसी प्रकार कवि ने तुंगभद्रा नदी को गंगा के समान महत्त्वपूर्ण बताया है जिसके तट पर चदंन, तिलक, साल, तमाल, पदमक, सरल, जलबेंत, बकुल, केतक, हिन्ताल आदि वृक्ष लगे हुए थे।

कवि ने कहा है कि तुगंभद्रा नदी के किनारे चक्रवाक, हंस, सारस, मयूर आदि पक्षी समूह नदी के सौन्दर्य में अभिवृद्धि करते थे। वाल्मीकि रामायण में अपनी पवित्रता और प्राकृतिक तत्त्वों की बहुतायत के कारण त्रिपथगामिनी दिव्य नदी गंगा का उल्लेख मिलता है। कवि ने बताया कि इस रमणीय नदी के तट पर थोडी–थोडी दूर पर ऋषियों के आश्रम बने हुए है और इसके दोनो तटो पर सैकडों उद्यान और पर्वत विद्यमान है। गंगा नदी के जल में नीलकमल खिल रहें है तथा हंस और सारसों के कलरव गूंज रहे है तथा चकवे और सदा मदमत्त रहने वाले विहंग इसके जल पर मंडरा रहे हैं।

इसी प्रकार कवि ने महर्षि अगस्त्य एवं राम की रावण सबंधी चर्चा के प्रसंग में नर्मदा नदी की सुषमा का वर्णन किया है और बताया है कि विंध्याचल पर्वत से निकलकर पश्चिमी समुद्र की तरफ आने वाली नर्मदा नदी में प्यासे भैंसे, हिरण, शेर, रीछ, हाथी आदि क्रीड़ा करते थे।

इस प्रकार कवि ने नदियों के सौन्दर्य विस्तार के द्वारा उसके तट पर निवास करने वाले पशु–पक्षियों, वनस्पतियों का विवेचन किया है तथा पर्यावरणीय घटकों की महत्ता पर प्रकाश डाला है।

रामायण में वर्णित समुद्र परितंत्र

रामायण युग में किसी भी प्रकार का जल प्रदूषण नहीं था। समुद्र का जल पूर्णरूपेण स्वच्छ था, इस कारण समुद्र में रहने वाले जल–जन्तु मछली, मगरमच्छ और कछुआ आदि ऐसे दिखाई देते थे जैसे कि वस्त्र उतार देने पर किसी मनुष्य के अंग–प्रत्यंग दिखाई देते है।

कवि ने अपने ग्रंथ में समुद्र की तंरगों का और उससे उछलते हुए जल का विवेचन किया है। कवि ने समुद्र जल की तुलना सुमेरू और मंदराचल पर्वतो से की है।

वाल्मीकि रामायण की लोकमान्य बालगंगाधर तिलक द्वारा रचित ''तिलक टीका'' में उल्लेख मिलता है कि जब चन्द्रमा की छाया समुद्र जल–तल पर पड़ रहीं थी तो ऐसा लग रहा था कि मानो वह अपने किरण रूपी हाथों से दिशा रूपी सुन्दरियों के अंगों पर फेन रूपी चंदन का लेप करने में प्रवृत्त हो। कवि ने वर्णन किया है कि समुद्र का जल नील वर्ण होने के कारण आकाश तुल्य प्रतीत होता था और आकाश भी समुद्र के समान लगता था। कवि का यह वर्णन पर्यावरण की दृष्टि से काफी महत्त्वपूर्ण है। रामायण काल में समुद्र दर्शन प्रसंग में भंयकर आकार वाले जीव जैसे कि महाग्राह (बड़े–बड़े घडियाल) तिमि, तिमिगंल (व्हेल तथा उसके जैसी बड़ी मछलियॉ), मकर और नाग जैसे जीवों का उल्लेख है।

वाल्मीकि रामायण में वर्णित वन परितंत्र

वन हमेशा से ही पर्यावरण तंत्र का महत्त्वपूर्ण घटक रहे हैं। सृष्टि के प्रारम्भ से ही वन जीवों के कल्याण के लिए अनुकूल दशाए प्रदान करते रहें है। एक वन के पारिस्थितिक–तन्त्र को निम्नलिखित चित्र के माध्यम से समझा जा सकता है।

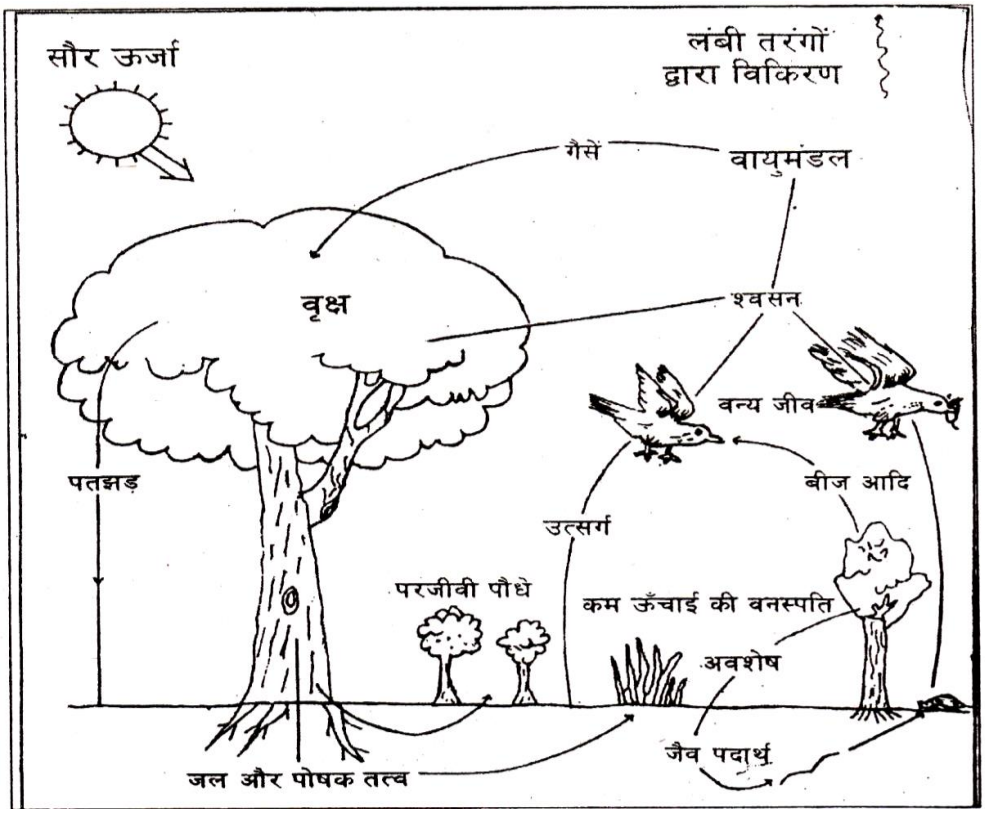

वन का पारिस्थितिकी तंत्र

कवि ने रामायण में आश्रम एवं तपोवन चित्रण, पर्वतो के वर्णन, वनस्पति, जीव–जन्तु आदि का विवेचन पर्यावरणीय दृष्टि से किया है। विशेष भौगोलिक परिवेश में सक्रिय पर्यावरणीय कारको का विश्लेषण जैव भूपरितंत्र का परिचायक है। वन्य जीवन में प्राणी अपनी भावनाओं और अनुभूतियों को प्रकृति और पर्यावरण से साहचर्य स्थापित करके देखता है।

कवि ने वन में पाये जाने वाले छोटे–बडें जीवो का उल्लेख किया है जिनके विषय में सुनकर मानव ह्रदय आनन्द से युक्त हो जाता है जिनमें भृगंराज (भंवरे) का वर्णन महत्त्वपूर्ण है। इसी प्रकार कवि ने बताया है कि वन जहॉ एक तरफ दुर्गम एवं भयावह होते है वहीं दूसरी तरफ मानव के लिए सुख का भी कारण होते हैं

जहाँ सीता यह अनुभव करती है कि वन में उसे कुश, कंटिले वृक्ष भी रूई और मृग–चर्म जैसे आनन्ददायी प्रतीत होंगे। हवा के झोंके चदंन रज जैसे होंगे तथा घास की शैया पर सोना रंगीन कम्बल युक्त बिछोने से ज्यादा सुखकारी होगा।

कवि ने वन परितंत्र का वर्णन प्रस्तुत करके मानव को प्रकृति के साथ अनुकूलन बनाये रखने का जो संदेश दिया है वह परितंत्र संतुलन एवं पर्यावरण संरक्षण का मूल आधार है।

कवि ने वाल्मीकि रामायण में वन परितंत्र का विवेचन करते हुए अजैविक घटकों मेघ, चित्रकूट पर्वत, सुवेल पर्वत, त्रिकूट पर्वत, ऋष्यमुक पर्वत, मलयपर्वत, गंगा नदी, मंदाकिनी, नर्मदा, पम्पासर का उल्लेख किया है। इसके साथ–साथ जैविक घटकों में प्राथमिक उत्पादक के रूप में आम, जामुन, असन, लोध्र, प्रियाल, कटहल, धव, अंकोला आदि वनस्पतियों का उल्लेख किया है। इसी प्रकार प्राथमिक उपभोक्ता के रूप में गज, मृग, वानर, हंस, कोकिला तथा द्वितीयक उपभोक्ता के रूप में शेर व व्याघ्र, रीछ और बिलाव का वर्णन किया है।

निष्कर्ष

भारतीय जलवायु के नियामक, सदानीरा नदियों के उद्‌गम स्त्रोत, वन–संसाधनों के द्वारा व्यापक पर्यावरण सरंक्षण में उपयोगी विभिन्न पर्वतमालाएँ तपस्वी–समुदाय प्रदत्त पर्यावरण के उत्प्रेरक सूत्र की आधार भूमिका ज्ञात होती है।

महर्षि द्वारा लिखित इस ग्रंथ में जैविक और अजैविक पर्यावरणीय घटकों का विश्लेषण दर्शनीय है। पेड़–पौधो की सजीवता और संवेदनशीलता का प्रभावी विवेचन तथा वन्य जीवों के उत्पादक–उपभोक्ता संबधों के आधार पर विभिन्न परितंत्रों में भोजन श्रृंखला का सहज अनुमान लगाया जा सकता है।

वाल्मीकि का प्रकृति चित्रण इस बात का सूचक है कि यदि मानव प्रकृति से च्युत होकर अविवेकपूर्ण तरीके से भोग–विलास का जीवन जीएगा और ऋषि–मुनियों के पर्यावरणीय संदेश को अनदेखा करेगा तो उसके दुष्परिणाम उसे भोगने पड़ेगे। मानव को चाहिए कि प्रकृति के साथ तालमेल कायम करके वह पर्यावरणीय संतुलन बरकरार रखें, इसी में उसका और उसकी भावी पीढ़ियों का उज्ज्वल भविष्य निहित है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. जलाघाताट्टहासोग्रां फेननिर्मलहासिनीम्

क्वचिद् वेणीकृतजलां क्वचिदावर्तशोभिताम्;

क्वचित्स्तिमितगम्भीरां क्वचिद् वेगसमाकुलाम्

क्वचिद् गम्भीरनिघोषां क्वचिद् भैरवनिःस्वनाम्;

हंससारससंघुष्टां चक्रवाकोपशोभिताम्,

सदामत्तैश्च विहगैरभिपन्नामनिन्दिताम्। –अयोध्या.50/16,17,19

2. पश्येममचलं भद्रे नानाद्विजगणायुतम्।

शिखरैः खमिवोद्विद्धैर्धातुमभिर्विभूषितम्।।– वा.रा. 2/94/4

3. केचिद् रजतसंकाशाः केचित् क्षतजसंनिभाः।

पीतमाजिंष्ठवर्णाश्च केचिन्मणिवरप्रभाः।।

पुष्पार्ककेतकाभाश्च केचिज्ज्योतीरसप्रभाः।

विराजन्तेऽचलेन्द्रस्य देशा धातुविभूषिताः।। वा.रा. 2/94/5–6

4. वाल्मीकि रामायण – 2/94/7

5. आम्रजम्ब्वसनैर्लोध्रैः प्रियालैः पनसैर्धवैः।

अंकोलैर्भव्यतिनिशैर्बिल्वतिन्दुकवेणुभिः।।

काश्मर्यारिष्टवरणैर्मधूकैस्तिलकैरपि।
बदर्यामलक्नेर्नीपैर्वेत्रधन्वनबीजकैः।।
पुष्पवदिभिः फलोपेतेश्छायावदिभिर्मनोरमैः।
एवमादिभिराकीर्णः श्रियं पुश्यत्ययं गिरीः।।

6. शतयोजन विस्तीर्णं विमलं चारूदर्शनम्।
श्लक्ष्णं श्रीमन्महच्चैव दुष्प्रापं शकुनैरपि।।
मनसापि दुरारोहं किं पुनः कर्मणा जनैः।
निविष्टा तस्य शिखरे लंका रावणपालिता।।– वा. रा. 6/39/18–19

7. महान्ति कूटानि महीधराणां धाराविधौतान्यधिकं विभान्ति।
महाप्रमाणैर्विपुलैः प्रपातैर्मुक्ताकलापैरिव लम्बमानैः।।
शैलोपलप्रसखलमानवेगाः शैलोत्तमानां विपुलाः प्रपाताः।
गुहासु संनादितबर्हिणासु हारा विकीर्यन्त इवावभान्ति।। –वा– रा.– 4 / 28/48–49

8. गिरिश्रृंगमिदं तात पश्च चोत्तरतः शुभम्।
भिन्नञजनाचयाकारमम्भोधरमिवोदितम्।। – वा. रा. 4/27/14

9. अयं स कालः सम्प्राप्तः समयोऽद्य जलागमः।
सम्पश्य त्वं नभो मेघैः संवृतं गिरिसंनिभैः।। – वा.रा. 4/28/2

10. मेघकृष्णाजिनधरा धरायज्ञोपवीतिनः।
मारूतापूरिगुहाः प्राधीता इव पर्वताः।। – वा. रा. 4/28/10

11. वा.रा.–2/94/8–10

12. वा.रा. 4/1/75–83

13. (अ) वा.रा. 4/40/56
(ब) शर्मा, डॉ. सुधीर कुमार : रामायण कालीन पर्यावरण चेतना की वैज्ञानिकता, हंसा प्रकाशन, जयपुर, 2012, पृ. 163

14. वा.रा. 4/27/2

15. वा.रा. 4/28/21

16. वा.रा. 2/28/19

17. वा.रा 4/27/3

18. डॉ. नवलता : संस्कृतसाहित्ये जलविज्ञानम्, नाग पब्लिशर्स, दिल्ली, 2004, पृ. 76–77

19. नदीं भागीरथीं रम्यां सरयूं कौशिकीं तथा।
कालिन्दीं यमुनां रम्यां यामुनं च महागिरिम्।।
सरस्वतीं च सिन्धुं च शोणं मणिनिभोदकम्।
महीं कालमहिं चापि शैलकाननशोभिताम्।। –वा.रा. 4/40/20–22

20. ततो वेदश्रुतिं नाम शिववारिवहां नदीम्।
उत्तीर्याभिमुखः प्रायादगस्त्याध्युषिंता दिशम्।।

गत्वा तु सचिरं कालं ततः शीतवहां नदीम्।
गोमतीं गोयुतानूपामतरत् सागरगंमाम्।।
गोमतीं चाप्यतिक्रम्य राघवः शीघ्रगैर्हयैः।
मयूरहंसाभिरूतां ततार स्यन्दिकां नदीम्।। –वा.रामायण 2/49/10–12

21. प्राचीनवाहिनीं चैव नदीं भृशमकर्दमाम्।
गुहायाः परतः पश्यः त्रिकूटे जाह्नवीमिव।।
चन्दनैस्तिलकैः सालैस्तमालैरतिमुक्तकैः।
पद्मकैः सरलैश्चैव अशोकचैव शोभिताम्।। –वा. रामायण 4/27/16–27
वानीरैस्तिमिदैश्चैव बकुलैः केतकैरपि।
हिन्तालैस्तिनिशैर्नीपैवैतसैः कृतमालकै।।
तीरजैः शोभिता भाति नानारूपैस्ततस्ततः।
वसनाभरणोपेता प्रमदेवाभ्यलंकृता।। –वा. रामायण–4/27/18–19,22

22. शतशः पक्षिसंघैश्च नानानादविनादिता।
एकैकमनुरक्तैश्च चक्रवाकैरलंकृता।।

23. तत्र त्रिपथगां दिव्यां शीततोयामशैवलाम्।
ददर्श राघवो गंगां रम्यामृषिनिषैविताम्।।
आश्रमैरविदूरस्थैः श्रीमद्भिः समलंकृताम्।
कालेऽप्सरोभिहृष्टाभिः सेविताम्भेहृदां शिवाम्।।
देवाक्रीडशताकीर्णां देवोद्यानयुतां नदीम्।
देवार्थमाकाशगतां विख्यातां देवपद्मिनीम्।।–वाल्मीकि रामायण 2/50/12,13,15

24. देवसंघाप्लुतजलां निर्मलोत्पलसंकुलाम्।
क्वचिदाभोगपुलिनां क्वचिन्निर्मलवालुकाम्।।
हंससारससंसघुष्टां चक्रवाकोपशोभिताम्।
सदामत्तैश्च विहगैरभिपन्नामनिन्दिताम्।।–वाल्मीकि रामायण 2/50/18–19

25. पश्यमानस्ततो विन्ध्यं रावणो नर्मदां ययौ।
चलोपलजलां पुण्यां पश्चिमोदधिगामिनीम्।।
महिषैः सृमरैः सिंहैः शार्दूलर्क्षगजोत्तमैः।
उष्णाभितप्तैरस्नतृषितैः संक्षोभितजलाशयाम्।। – वा.रामायण 7/31/19.20

26. तिमिनक्रझषाः कूर्मा दृश्यन्ते विवृतास्तदा।
वस्त्रापकर्षनेव शरीराणि शरीरिणाम्।।–वा.रामायण 5/1/74

27. डॉ. सुधीर कुमार : रामायण कालीन पर्यावरण चेतना की वैज्ञानिकता, हंसा प्रकाशन, जयपुर, 2012, पृ. 176

28. डॉ. सुधीर कुमार : रामायण कालीन पर्यावरण चेतना की वैज्ञानिकता, हंसा प्रकाशन, जयपुर, 2012, पृ. 173

29. डॉ. सुधीर कुमार : रामायण कालीन पर्यावरण चेतना की वैज्ञानिकता, हंसा प्रकाशन, जयपुर, 2012, पृ. 174

30. शर्मा, डॉ. सुधीर कुमार : रामायण कालीन पर्यावरण चेतना की वैज्ञानिकता, हंसा प्रकाशन, जयपुर, 2012, पृ. 183

31. अमी पवनविक्षिप्ता, विनदन्तीव पादपाः।
षट्पदैरजुकूजद्भिर्वनेषु मधुगन्धिषु।।
गिरिप्रस्थेषु रम्येषु पुष्पवद्भिर्मनोरमैः।
संसक्तशिखराः शैला विराजन्ते महाद्रुमैः।
पुष्पसंच्छन्नाशिखरा मारूतोत्क्षेपचंचलाः।
अमीमधुकरोत्तंसाः प्रगीता इव पादपाः।। —वा.रा. 4/1/18—20

32. कुशकाशशरेषीका ये च कण्टकिनो द्रुमाः।
तूलाजिनसमस्पर्शो मार्गे मम सह त्वया।।
महावातसमुद्भूतं यन्मामवकरिष्यति।
रजोरमण तन्मन्ये परार्ध्यमिव चन्दनम्।।
पत्रं मूलं फलं यत्तु अल्पं वा यदि वा बहु।
दास्यसे स्वयंमाहृत्य तन्मेऽमृतरसोपम्।। —वा. रामायण 2/30/12,13,15

❖◆❖